अर्थव्यवस्था पर केंद्रीय बैंकर के प्रभाव के स्रोत पर टिप्पणी*

या. वे. रेड्डी

विचारगोष्ठी में शरीक होने और अध्यक्ष महोदय, आपकी इच्छा के अनुसार प्रोफेसर चेकेतती के पर्चे ''अर्थव्यवस्था पर केंद्रीय बैंकर के प्रभाव के स्रोत'' पर आरंभिक अनौपचारिक टिप्पणी देने में मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। प्रोफेसर चेकेतती ने पहले तो सारगर्भित शैली में केंद्रीय बैंकिंग के कार्य में मौद्रिक सिद्धांत लागू करने के क्षेत्र में हुई प्रगति में आई समानता को रेखांकित किया है और उसके बाद उन्होंने शिक्षाशास्त्रियों और व्यवहारकर्ताओं दोनों के समक्ष तीन चुनौती रखी है। मैं एकरूपता के मुद्दे पर कुछ सामान्य टिप्पणी करुंगा और बाद में चुनौती के संबंध में टिप्पणी करूंगा। बेशक मैं जहाँ भी उपयुक्त होगा भारत के अनुभव का आधार लूंगा।

जहां तक उद्देश्यों का सवाल है यह सच है कि मूल्य स्थिरता जैसे प्राथमिक उद्देश्य के संबंध में सभी केंद्रीय बैंकरों की सोच एक जैसी होती जा रही है। यह ध्यान में रखना उपयोगी होगा कि अभी हाल में वृद्धि दर में अस्थिरता और मुद्रास्फीति के बीच तालमेल के पीछे वित्तीय स्थिरता संबंधी उतना ही महत्वपूर्ण विचार छुप गया है। भारत में मूल्य स्थिरता के साथ-साथ सच्चे ऋण की मांग पूरा करने के उद्देश्य में वृद्धि संबंधी उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से ध्यान में रखा गया है तथा नीतिगत संप्रेषण और नीतिगत उपायों में वित्तीय स्थिरता पर दिया जानेवाला जोर हाल के वर्षों में महत्वपूर्ण हो गया है।

दूसरा, मैं इस बात से सहमत हूं कि केंद्रीय बैंकों के पास पहले की अपेक्षा बेहतर परिकल्पना है और पिछले दो दशकों में केंद्रीय बैंकों की अलग पहचान उभरी है। परंतु संतोषजनक राजकोषीय नियमों के बिना किसी भी मौद्रिक नियम का कार्यान्वयन तथा केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता या स्वतंत्रता और उनकी जवाबदेही का निर्वाह कठिन हो जाता है। मुख्यतया राजनीतिक अर्थशास्त्रीय कारणों से केंद्रीय बैंक आम तौर पर 'एकल उद्देश्य' या अधिदेश पर ध्यान केंद्रित करते हैं। यह एक सुविधाजनक व्यवस्था है और यह मात्र केंद्रीय बैंक को एक अलग पहचान देता है और स्वायत्तता का आधार बनता है। भारत में मौद्रिक नीति पर राजकोषीय प्रभुत्व 1997 में राजकोषीय घाटे के स्वतः मौद्रीकरण की समाप्ति के साथ तथा इस वर्ष से सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गम में प्रतिभागिता से हट जाने से कम हो गया है। वस्तुतः रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय नियमों के महत्व को ध्यान में रखते हुए राजकोषीय नियमों के निर्माण में सक्रिय और परस्पर प्रभावित करने वाली भूमिका अदा की है। राजकोषीय जवाबदेही विधान पर विचार करते समय हमने भारत सरकार और राज्यों को तकनीकी सहायता दी। अतः राजकोषीय और मौद्रिक नीति के बीच सामंजस्य की बात का हम समर्थन करते हैं और भारत में अपने अनुभव के आधार पर मैं संरचनागत बदलाव के मामले में, खासकर अर्थव्यवस्था से संबंधित विधान निर्माण के संबंध में राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारियों के बीच समन्वय की महत्ता पर जोर देना चाहूंगा ।

तीसरा, अल्पावधिक ब्याज दर के साधन पर दिए गए जोर के संबंध में मैं यह कहना चाहूंगा कि वास्तविक ब्याज दर कुछ मामलों में मुद्रास्फीति प्रत्याशा को नियंत्रित करने के लिए उठाए गए नीतिगत कदमों का परिणाम है। मुद्रास्फीति के औसत स्तर में परिवर्तन का निकटतम कारण वस्तुतः मुद्रास्फीति प्रत्याशा में बदलाव है और इसलिए नीति निर्माता मुद्रास्फीति प्रत्याशा में वृद्धि के किसी भी संकेत के प्रति सचेत रहकर अपनी विश्वसनीयता को कायम रखने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। इस भविष्यमुखी दृष्टि के कारण भारत में हाल के वर्षों में मुद्रास्फीति दर आठ प्रतिशत से अधिक के स्तर से घटकर लगभग चार से पांच प्रतिशत रह गई है।

यह भी आवश्यक है कि हम मुद्रास्फीति संबंधी धारणा के महत्व को समझें। दूसरे शब्दों में यदि ऐसे पण्यों की कीमत, जिन्हें हम बार-बार खरीदते हैं, बढ़ती है तो मुद्रास्फीति संबंधी धारणा उस धारणा से भिन्न होगी, जब उदाहरण के लिए टेलिविजन सेट की कीमत में वृद्धि हो। मुद्रास्फीति प्रत्याशा और मुद्रास्फीति संबंधी धारणा में बहुत कुछ साम्य होने के बावजूद मुद्रास्फीति नीति के परिप्रेक्ष्य में इन दोनों के बीच अंतर को ध्यान में रखना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि बार-बार खरीदी जाने वाली चीजों के दाम बढ़ते हैं तो मुद्रास्फीति संबंधी धारणा का रुख तेजी की ओर रहता है।

मुद्रास्फीति प्रत्याशा की निगरानी करना और उसे प्रभावित करना तथा मुद्रास्फीति के संबंध में भावी संकेत देने के बीच नाजुक अंतर का एक रोचक मुद्दा है। व्यवहार में इस प्रकार का फर्क करना एक कठिन कार्य है, लेकिन नीति निर्धारण और नीति संप्रेषण में इस प्रकार के फर्क को ध्यान में रखना आवश्यक हो गया है। जैसा कि कल लंदन सिटी में लार्ड मेयर की दावत में गवर्नर मर्विन किंग ने अपने भाषण में जोरदार ढंग से तर्क दिया कि इस अत्यंत अनिश्चित दुनिया में भावी दिशानिदेश देने में केंद्रीय बैंक

* 23 जून 2006 को लंदन में बैंक ऑफ इंग्लैंड द्वारा आयोजित केंद्रीय बैंक गवर्नरों की विचार-गोष्ठी में चर्चा आरंभ करते हुए भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डा. या. वे. रेड्डी द्वारा दी गई अनौपचारिक टिप्पणी।

के समक्ष खतरा है। गवर्नर किंग ने कहा *''मौद्रिक नीति समिति मुद्रास्फीति की संभावना के संबंध में प्राप्त सभी नई सूचना के आधार पर हर माह एक नए निर्णय पर पहुंचती है। हम यह निर्णय पहले से ही ले नहीं लेते। अतः, अगले कुछ महीनों की ब्याज दरों के संबंध में कुछ सीधे-सीधे इशारा करना वित्तीय बाजारों को इस मुगालते में रखने के समान है कि वे यह विश्वास करें कि अगले कुछ महीनों के लिए निश्चित योजनाएं हैं, जबकि ऐसी कोई योजना नहीं है।''*

वस्तुतः कुछ दिन पहले फेडरल रिज़र्व ने यह घोषणा की कि चेयरमैन बेन बेरनान्के ने अनेक नीतिगत संप्रेषण संबंधी मुद्दों पर विचार करने के लिए एक उप समिति गठित की है। बाजार प्रतिभागियों के लिए बाजार की भावी दिशा क्या होगी इस पर बाजार प्रतिभागियों को सोचने देने के बजाय केंद्रीय बैंक द्वारा सोचा जाना कितना उचित है, यह प्रश्न कुछ वर्ष पहले यूरोपियन सेंट्रल बैंक के श्री स्किओप्पा द्वारा पूछा गया था। यह आश्चर्यजनक नहीं है कि लगभग सभी केंद्रीय बैंकर सूचना देना चाहते हैं, लेकिन मार्गदर्शन देने से बचते हैं । इसमें उल्लेखनीय अपवाद चेयरमैन एलन ग्रीन स्पैन थे, हालांकि उनके उत्तराधिकारी श्री बेन बेरनान्के इस दृष्टिकोण पर स्पष्ट रूप से पुनर्विचार कर रहे हैं। और इसके लिए उचित कारण भी है। भावी दिशा के संबंध में मार्गनिदेश तब और कठिन हो जाता है जब मौद्रिक प्राधिकारियों की नीतिगत दरें तटस्थ ब्याज दरों के संबद्ध दायरे के काफी निकट हो जाती हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि उस स्थिति की तुलना में जब ब्याज दरें संभव तटस्थ दरों से स्पष्ट रूप से दूर रहती हैं तथा ब्याज दरों की दिशा सबके लिए स्पष्ट रहती है, विभिन्न विकल्पों के बीच तालमेल अधिक कठिन, व्यक्ति परक और संदर्भाश्रित हो जाता है। संप्रेषण की समस्या और कठिन हो जाती है यदि इसके साथ-साथ मुद्रास्फीति प्रत्याशा पर भी दबाव हो।

हम भारत में विस्तृत सूचना देते हैं तथा संबंद्ध विश्लेषण पूरी तरह सबके समक्ष रखते हैं ताकि भावी प्रत्याशा को प्रभावित किया जा सके, लेकिन विश्लेषण से स्पष्ट निष्कर्ष देने या भावी मार्गनिदेश देने में हम संकोच करते हैं ।

चौथा, यद्यपि केंद्रीय बैंकों का ध्यान अल्पावधिक ब्याज दर पर केंद्रित रहता है तथापि व्यवहार में इस लिखत पर निर्णय लेते समय अनेक संकेतकों, देशी और विदेशी, जिनमें मुद्रास्फीति प्रत्याशा भी शामिल है, की निगरानी और विश्लेषण करना जरूरी हो जाता है। संभवतः जिन देशों में मुद्रास्फीति के निर्धारित लक्ष्य हैं, वहां भी ऐसा ही होता है। हम भारत में बहुल संकेतक दृष्टिकोण को मानते हैं। यहां दो मुद्दों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। जहां ब्याज दरें नियंत्रित हैं, वहां जटिलता उत्पन्न होती है। अक्सर अल्पावधिक और दीर्घावधिक ब्याज दरों के बीच अव्याख्येय असंबद्धता रहती है - जिसे चेयरमैन ग्रीनस्पैन ने 'पहेली' कहा था।

पांचवां, हमारी दृष्टि में वित्तीय स्थिरता के लिए ब्याज दर साधन के प्रयोग के साथ अन्य विवेकपूर्ण मानदंडों का प्रयोग आवश्यक हो सकता है। कभी कभी तो अल्पावधिक ब्याज दर बढ़ाने और विवेकपूर्ण मानदंडों में सख्ती लाने के बीच खींचतान रहती है, यदि बाजार के कुछ भाग से जोखिम उत्पन्न होने की संभावना हो। आस्ति कीमतों में तीव्र वृद्धि होने की पृष्ठभूमि में अत्यंत विस्तृत ऋण परिचालनों के कारण ऋण मार्जिन में और जोखिम आधारित पूंजी अपेक्षा में समायोजन आवश्यक हो सकता है। भारत में हाल के वर्षों में अनेक आस्ति कीमतों में असामान्य वृद्धि को देखते हुए हम आस्ति के कतिपय संवर्गों के लिए बैंकों द्वारा जोखिम भार और प्रावधान संबंधी अपेक्षा में वृद्धि पर जोर देते रहे हैं।

खास मुद्दों की बात करें तो चूँकि मौद्रिक नीति का केंद्र बिंदु मैक्रो स्तर पर 'कुल मांग' को प्रभावित करना है, ये कुलराशियां माइक्रोस्तर पर कार्यरत विभिन्न शक्तियों के मिश्रण का प्रतिनिधित्व करती हैं और कभी कभी ये शक्तियां भिन्न-भिन्न दिशाओं में अभिमुख रहती हैं। उदाहरण के लिए जब सामान्य कीमतों का स्तर बढ़ता है, तब ऐसे भी क्षेत्र हो सकते हैं जहां कीमतें घट रही हों। रोजगार, खपत, उत्पादन और निवेश के मामले में भी ऐसा हो सकता है। अतः मैक्रो इकनामिक विश्लेषण के माइक्रो आधार के बीच तदनुरूपता का संबंध हो - आवश्यक नहीं है। इन दोनों के बीच संबंध काफी कुछ अस्पष्ट सा है, लेकिन यह संबंध बहुत महत्वपूर्ण है तथा इसकी महत्ता और सीमाओं को ध्यान में रखते हुए इसे गंभीरता से लेना चाहिए।

दूसरा, वित्तीय बाजार की किसी भी स्थिति में अत्यधिक लेवरेजिंग संभावित अस्थिरता का स्रोत है। चूंकि वित्तपोषण की लागत से लेवरेजिंग प्रभावित होती है, अतः ऋण की लागत और उपलब्धता को प्रभावित करने वाले निर्णय कुल मांग स्थितियों को प्रभावित करते हैं। यदि वित्तपोषण का स्रोत बैंक निधि न हो, तब भी फर्मों के आंतरिक संसाधनों की अवसर लागत को बाजार की ब्याज दर स्थितियां अवश्य प्रभावित करती हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ब्याज दर और विनिमय दर सरणी की प्रभावशीलता ऋण और विदेशी मुद्रा बाजारों की गहराई और सक्रियता पर निर्भर करती है। भारत में इसलिए इन बाजारों को विकसित करने के लिए विशेष प्रयास किए गए हैं ताकि संचरण सरणी की प्रभावशीलता में सुधार हो। सामान्य रूप से यह माना जा सकता है कि बाजार आधारित लिखतों के साथ-साथ प्रत्यक्ष मौद्रिक साधनों का प्रयोग कर कम विकसित वित्तीय बाजारों में नीति की समग्र प्रभावशीलता में सुधार लाया जा सकता है।

बाजार के विभिन्न भागों में अनेक कारणों से सांकेतिक अपरिवर्तनशीलता उत्पन्न हो जाती है । ये कारण हैं - संगठित और असंगठित बाजारों का समांतर अस्तित्व, कर व्यवस्था, श्रम और आय नीति तथा ट्रेड यूनियन की शक्ति, प्रतिस्पर्धा का स्तर अथवा बाजार अपूर्णता आदि। उदाहरण के लिए चूंकि कम विकसित और अपेक्षाकृत अपूर्ण और अविकसित बाजारों में सांकेतिक अपरिवर्तनशीलता अधिक रहती है, इसलिए यह निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए कि मौद्रिक नीति ऐसी स्थितियों में ही अधिक प्रभावी होती है। इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती कि भारत में

ईक्विटी बाजार की हाल की घटनाओं की आसानी से व्याख्या नहीं की जा सकती और इसलिए हम इस टिप्पणी को समझ सकते हैं कि ईक्विटी बाजार अपनी मर्जी से चलते हैं।

एक समूह के रूप में केंद्रीय बैंकर हाल की अवधि में थोड़े स्पष्ट सूचकांकन के लिए श्रेय ले सकते हैं। सूचकांकन में भारतीय स्थिति गौरतलब है। सूचकांकन केवल संगठित क्षेत्र के कर्मचारियों के लिए उपलब्ध है, जो कुल श्रमिकों के दस प्रतिशत से भी कम है और उनमें भी मुख्यतः सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों के लिए ही सूचकांकन उपलब्ध है। सूचकांकन का सिद्धांत पाने के बाद संगठित क्षेत्र के श्रमिक इसे नहीं छोड़ते हैं, चाहे मुद्रास्फीति का स्तर कुछ भी हो । इसमें कोई संदेह नहीं कि हाशिए पर सूचककांकन के लिए दबाव कम है, लेकिन वर्तमान सुविधाओं को हटाना आसान नहीं है।

नीतिगत उपायों के संबंध में मैं यह कहना चाहूंगा कि अपेक्षाकृत अधिक स्थिर आर्थिक वातावरण में नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता, उसका विस्तार और उसकी अवधि कम से कमतर होती जाती है। अब केंद्रीय बैंक नन्हें कदम उठाते हैं - कभी बार-बार और कभी लंबे अंतराल के बाद और दोनों दिशाओं में - और ऐसा प्रतीत होता है जैसे ये कदम आर्थिक गतिविधि के समुद्र में उठनेवाली विशाल लहरों के बदले छोटी-छोटी लहरों के लिए उठाए गए हों। उदाहरण के लिए वर्तमान अवधि में हम जिसे ब्याज की तटस्थ दर कहते हैं, पिछले कई वर्षों की तुलना में काफी न्यूनतर है।

महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि नवोदित बाजार अर्थव्यवस्थाओं से संबंधित तटस्थ दर, जो जागतिक दरों के साथ घट रही है, विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में स्पष्ट रूप से उच्चतर होगी। यदि ऐसा है तो कितना उच्चतर उपयुक्त माना जाएगा ?